॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

भगवन् ! मैं प्रातःकाल की पवित्र वेला में आपके चरणों की वन्दना कर रहा हूँ। वन्दना का अभिप्राय है कि मैं अपने हृदय को उज्ज्वल बना रहा हूँ। आपकी शुद्ध पवित्र अमृत सम्वेदना के साथ प्रभु ! मैं अपने हृदय को निर्मल और स्वच्छ जल से स्वच्छ बनाना चाहता हूँ। हे प्रभु ! तेरा जो अमृतमयी ज्ञान है, अमृतमयी जो तेरी नम्रता है, अमृतमयी जो तेरी उदारता है, अमृतमयी जो तेरा उद्गम है, अमृतमयी जो हृदय है, अमृतमयी जो तेरा यह जगत् है, अमृतमयी, जो प्रभु मेरी ज्ञान की एक कामना है, उससे मैं अपने हृदय को पवित्र बनाना चाहता हूँ। हे प्रभु ! तू कितना उद्गम है, तू कितना उदार है, तू कितना महान् है, तू कितना व्यापक है, तेरी कितनी उज्ज्वलता प्रभु ! इस सँसार में व्यापक रही है। हे प्रभु ! तुम कितने व्यापक हो और मैं कितना अल्पज्ञता में रमण करता हूँ। मुझे यह प्रतीत नहीं है कि इससे आगे मुझे क्या भोजन प्राप्त होगा। परन्तु प्रभु ! आप मेरे उस भोजन को भी जानते हैं जो आगे आने वाला भोजन मुझे प्राप्त होगा। उनमें जो अमृत मुझे प्राप्त होगा उसको भी आप स्वतः जानने वाले हैं, परन्तु मेरे लिए कोई मार्ग ऐसा नहीं, मेरे लिए कोई स्थान ऐसा नहीं, जहाँ प्रभु ! मैं पाप कर्म करने के लिए उद्यत हो जाऊँ। प्रभु ! वह कौन सा स्थान है जहाँ मैं पाप कर्म कर सकता हूँ। परन्तु प्रभु ! पाप मैं उस काल में करता रहता हूँ, जब प्रभु ! आपका जो आनन्दमयी स्रोत है वह मेरे से पृथक हो जाता है। मैं उस आनन्दमयी जो ज्ञान है, अमृतमयी जो पवित्रवत् है मैं उसको अपने से दूर नहीं चाहता। हे जगत् रचन् अस्वनम्। प्रभु मैं आपको बारम्बार नमस्कार कह रहा हूँ। आप मेरी इस प्रातःकाल की नमः को स्वीकार करो क्योंकि आप उदार हैं, महान हैं, पवित्र हैं, शुद्ध हैं, आनन्दवत स्रोत हैं। हे प्रभु ! इसलिए मैं आपको बारम्बार नमस्कार कर रहा हूँ।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 503 समग्र अंक : 578
वर्ष : 42 समग्र वर्ष : 49

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	श्रावणी-पर्व व पूज्य महानन्द जी	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-18
4.	मानवता	पूज्यपाद-गुरुदेव	19-35
5.	गायत्री की विवेचना	पूज्यपाद-गुरुदेव	36
6.	दान, पुस्तकों की सूची, प्राप्ति के स्थान व सूचना इत्यादि		37-40

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्मोत्सव

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज, आदि गुरु ब्रह्मा जी के परम प्रिय शिष्य का 72वाँ जन्मोत्सव दिनाँक 9 सितम्बर से 11 सितम्बर, 2014 तक गुरुदेव की कर्मभूमि एवम् निर्माणीत यज्ञीय स्थली लाक्षागृह बरनावा में सामवेद ब्रह्म पारायण महायाग के आयोजन द्वारा प्रतिवर्ष की भाँति बड़े हर्षोल्लास के साथ श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.) द्वारा मनाया जा रहा है। आप सभी इस यज्ञ में अपने परिवार, सगे-सम्बन्धियों एवम् मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

श्रावणी-पर्व

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता महिमावादी हैं और उसका यह अनन्तमयी जगत माना गया है। प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में नाना प्रकार का विचार-विनिमय करता रहा है। कहीं मानो विज्ञान के युग में प्रवेश हो जाता है, कहीं नाना प्रकार की चित्रावलियों में रमण करने लगता है, कहीं मानो लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ने लगता है, कहीं वह आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता रहा है। परन्तु उसके नाना प्रकार के, उस परमपिता परमात्मा को दृष्टिपात करना चाहता है और अपने मनो में यह विचारता रहता है कि मैं नाना प्रकार के जो कर्म हैं और नाना प्रकार के जहाँ महापुरुषों ने तपस्याएँ की हैं, नद-नदियों के तट पर वहाँ भी मानव की एक निष्ठा बनी रहती है क्या (कि) कोई परमाणु मुझे ऐसा प्राप्त हो जाये जो परमाणु मेरे अन्तःकरण को स्पर्श करता, मेरे हृदय में और मस्तिष्क को ऊर्ध्वा में ले जाये और परमपिता परमात्मा की महती में रमण कर जाए। ऐसी मनोनीत भावना यह परम्परागतों से मानवीय मस्तिष्कों में चली जा रही है और यह सृष्टि के प्रारम्भ से ही मानव विचार-विनिमय करता रहा है। मानो कहीं अहम विशिष्ठाम् भूतप प्रव्हाणम कहीं वशिष्ठ जैसे महापुरुष जब

तपस्या करते हैं तो मानो देखो वह सदियों तक उसकी विभिन्न वृत्तियों में रत्त होता रहा है। और यह विचार रहा है कि यहाँ महापुरुषों ने तप किया—इसको **तीर्थ** के नामों से मानव अपने में वर्णन करता रहता है। परन्तु जब मानव आध्यात्मिकवाद में, यह वेद के वांगमय में प्रवेश करता है तो वेद का एक मन्त्र आज के हमारे इस मन्त्रार्थ में आ रहा था और वेदमन्त्र यह कहता है अपनाम भूतम ब्रह्मणा ब्रह्मा आत्मा मेरे प्यारे ! देखो वेद का मन्त्र यह कहता है कि यह जो आत्मा है इसके जानने से ही ब्रह्म को जाना जाता है। इसलिए हमारा जो अन्तःकरण है, हमारा जो पञ्च महाभूतों का जो लोक है वह पञ्च महाभूत मानो देखो इतना आत्मा अपना वास करता रहा है इस आत्मा को जानने के लिए मानव सदैव तत्पर रहे तो वह परमपिता परमात्मा इसी में उसको प्राप्त हो जाता है।

परमपिता परमात्मा को प्राप्त करने का मार्ग

देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र हमें नाना प्रकार के यागों की प्रेरणा देता रहता है। जिससे हमारा वायुमण्डल पवित्र बन जाए और वायुमण्डल के पवित्र बनने पर मानवीयत्व एक दूसरे में मानो पवित्रतता की आभा में रत्त हो जाये। तो ऐसा बेटा ! प्रत्येक मानव अपने में अन्वेषण करता रहा है अथवा विचार विनिमय करता रहा। आज का हमारा वेदमन्त्र यह कहता है कि परमपिता परमात्मा को प्राप्त करना है तो हे मानव तू अपनी मानवीय इन्द्रियों को और आन्तरिक जगत को अपने में धारण करने की सदैव अपने में धारयामि बन, जिससे मानवत्व तेरा ऊर्ध्वा में गमन करने लगे। मेरे प्यारे ! देखो मानव अपने उदर की पूर्ति में और पदों की लोलुपता में मानो लगा रहता है परन्तु जिस आत्मा के कारण नाना प्रकार की उपाधियाँ मानव को प्राप्त होती हैं और उसी से वह अलंकृत होता रहा है तो उस आत्मा को जानने के लिए भी मानव को अपने में प्रयास करना चाहिए और प्रयत्नशील रहना चाहिए। जो आत्म चेतना जिसके कारण यह हमारा शरीर चेतनित बन रहा है और यह विष्णु के रूप में रत्त होता रहा

है तो इसको मैं जानने के लिए सदैव तत्पर रहूँ। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र जहाँ ये प्रेरणादायक वाक्यों को प्रस्तुत कर रहा है वहाँ एक-एक वेद का मन्त्र बेटा ! नाना प्रकार की विद्याओं का भी संकेत देता है और वह ऐसी विद्याओं का संकेत देता है जहाँ यह समाज एक-दूसरे को जानता हुआ अपने मानवीयत्व को ऊँचा बना सकता है और राष्ट्र और समाज उसी से ऊँचा बनता है। क्योंकि जिस-जिस काल में समाज में मानो देखो चरित्र की हीनता हो जाती है उसी काल में मानव एक दूसरे के प्राणों को हनन करने के लिए तत्पर रहता है। तो आज हम जब यह विचारते रहते हैं हम अपनी मानवीयता को जानने के लिए हम आत्मा का आश्रय लें और आत्मा का आश्रय मानो देखो परमात्मा का आश्रय लेता हुआ इस संसार रूपी मानो यह जो समुद्र है अथवा यह जो ब्रह्माण्ड है इसको जानने के लिए सदैव तत्पर रहें।

ज्ञान के अनुसार कर्म

मेरे प्यारे ! देखो हम प्रायः देखो भगवान् राम की चर्चाएँ प्रायः हम करते रहते हैं। जब मैं राम के जीवन में प्रवेश करता हूँ, राम के जीवन की प्रतिभा हमारे समीप आती है तो उनका चरित्र, उनकी मानवीयता कितनी महानता में सदैव रत्त रही है। क्योंकि राम जैसे अवनज ब्रहे मानो सखा जो राज्यम् ब्रह्मा जो मर्यादा अपने में धारण करने वाली क्योंकि जब तक मानव स्वयँ अपने में मर्यादा को धारण नहीं करेगा, क्रियात्मकता में अपने जीवन को नहीं बनाएगा ज्ञान के अनुसार कर्म को जब तक नहीं ला सकेगा जब तक उस मानव का कल्याण नहीं होगा। वह मानव अधूरेपन में रत्त रहता है। तो हमारे यहाँ वेद का मन्त्र आता है धमर्म ब्रहे व्रणाः ज्ञानाम् तनम ब्रह्मे देवत्वाम् श्रवाणाम भूतप प्रव्हा। वेद का मन्त्र यह कहता है कि **हे मानव तेरे द्वारा ज्ञान होना चाहिए** और ज्ञान भी आत्मा के मानो माध्यम से होना चाहिए और उसी ज्ञान के अनुसार यदि तेरा कर्म मानो कर्त्तव्य तेरे में निहित हो जायेगा तो तेरा जीवन महानता में

परणित हो जाएगा। क्योंकि बिना कर्म किए हुए यह मानव अपंग हो जाता है और बिना ज्ञान के मानो देखो यह मानव का जीवन देखो अपंगमं ब्रह्मे। देखो, जैसे एक मानव देखो नेत्रों से हीन हो जाता है या सक्षम ब्रह्मा श्रोत्रों से हीन हो जाता है ऐसे मानव की एक दशा बन जाती है, वह अपनी दशा को वास्तविकता को त्याग देता है। तो इसीलिए हमारे यहाँ वेदमन्त्रों में नाना प्रकार की प्रतिभाओं का वर्णन आता रहा है। ज्ञान और विज्ञान में मानव सदैव परम्परागतों से मानो अनुष्ठान करता रहा है। नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ता रहा है जिससे लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाला जो प्राणी है वह मेरे प्यारे ! नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की यात्रा करके अपने को जानने के लिए सदैव तत्पर होता है। जो बाह्य जगत में मानो चेतना का दर्शन नहीं होता तो मानो आन्तरिक जगत में ही अपने को ले जाता है और **बाह्य जगत को आन्तरिकता में ले जाने का नाम ही चेतना में बद्ध हो जाना है।** तो मेरे प्यारे ! देखो आज का विचार मैं विशेष नहीं देने आया हूँ केवल यह कि हमारे जीवन में एक महानता प्रायः होनी चाहिए।

प्रातः कालीन सुगन्धी होनी चाहिए

परन्तु आज मुझे कहीं से यह प्रेरणा आ रही है कि याग के ऊपर विचार-विनिमय दिया जाए। बेटा ! मैंने तुम्हें कई कालों में वर्णन करते हुए कहा है कि हमारे यहाँ ऋषि मुनि जिस स्थली पर तपस्या में परणित होते रहे हैं मानो उसमें सबसे प्रथम वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते हुए वह स्वाहाः से अन्तरिक्ष को भरण कर देते हैं क्योंकि यह जो स्वाहाः शब्द है यह मानो देखो मानव के अंग-संग ओत-प्रोत हो जाता है। **स्वाहाः कहते हैं शुद्ध और पवित्र को** और जितने भी शब्द मानव के अन्तःमन मस्तिष्क में मानो शुद्धिकरण में प्रवेश होते रहे हैं उतना मानव का जीवन पवित्रता में प्रवेश होता रहेगा। तो विचार-विनिमय यह कि हम अपने वायुमण्डल को मानो देखो सुगन्धि से भरण कर दें जिससे हमारे हृदय में सुगन्ध आने लगे। मुझे वह

काल स्मरण आता रहता है—मैं भगवान् राम की चर्चा कर रहा था। प्रातःकालीन बेटा ! जब भगवान् राम अपनी यज्ञशाला में याग करते रहे तो वह अपने राष्ट्र में यह घोषणा किया करते क्या हे राष्ट्रवेत्ताओं तुम्हारे यहाँ नाना प्रकार का तुम्हारा राष्ट्र सुगन्धि से परणित हो जाना चाहिए, शब्दों से भरण हो जाये। मानो देखो राम ने यह कहा था अपने कर्मवेत्ताओं से क्या राष्ट्र में यह घोषणा करो क्या राष्ट्र में सुगन्धि होनी चाहिए। क्योंकि राष्ट्र में सबसे प्रथम जो सुगन्धि है वह चरित्र की सुगन्धि होनी चाहिए और **चरित्र मानव का जब परिपूर्ण होता है जबकि वह मानव ज्ञान से परिपक्व होता है अथवा विज्ञान से परिपक्व होता है** और देखो ज्ञानाम् वेदाम् मन्त्रम ब्रह्मा क्रतम देवाः जब वेदमन्त्रों का मानव उद्गीत गाता है तो वायुमण्डल मानो शब्दों की धाराओं पर, अग्नि की धाराओं पर शब्द विद्यमान हो करके द्यौ में प्रवेश हो जाता है। हमारे यहाँ विज्ञानवेत्ताओं ने नाना प्रकार के शब्दों के ऊपर अन्वेषण किया है। मानो शब्द मुनिवरो ! देखो यह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके जब द्यौ में प्रवेश कर जाता है और द्यौ में जब यह भरण हो जाता है तो द्युयाम भूतम् ब्रह्मे यह द्यौ ही है जो बेटा ! देखो इस संसार को मानो प्रेरणायुक्त तरंगे प्रदान करता रहता है। मेरे प्यारे ! देखो मैं आज तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि राम यह प्रातःकालीन याग करना और अपनी उपदेश मञ्जरी में यही कहा करते कि राष्ट्र को यदि ऊँचा बनाना है, समाज को महान बनाना है तो प्रातःकालीन सुगन्ध आनी चाहिए। हमारे यहाँ जो साकल्य देखो हुत किया जाता है उसमें सबसे प्रथम सुगन्ध होती है और द्वितीय उसमें पुष्टि होती है और देखो वही रोगनाशक होती है मानो देखो यह तीन प्रकार का साकल्य जब अग्नि में हुत कर दिया जाता है। मेरे प्यारे ! देखो एक रोगनाशक है यह चतुर्तम ब्रह्मा वर्णम जब यज्ञशाला में हुत करता है यजमान तो मेरे प्यारे ! देखो अपने हृदय की अन्तर्भावनाओं में जब वह पवित्र हो जाता है। तो विचार आता रहता है वहीं देखो अपनी मनोनीत हृदय की जो विचार धाराएँ हैं उसी से मानव अपने में ऊर्ध्वा को गमन करता रहता है। तो

भगवान् राम प्रातःकालीन यह कहा करते थे अपने राष्ट्रवेत्ताओं से कि राजा के राष्ट्र में मानो देखो सुगन्ध होनी चाहिए और वह सुगन्ध मानो साकल्य को अग्नि में हुत किया जाता है। राजा के राष्ट्र में प्रायः ध्वनि होनी चाहिए और वह ध्वनि जो वेदमन्त्रों में ध्वनि आती है और वेदमन्त्रों का जब उद्गीत गाया जाता है तो प्रत्येक मानव का अन्तःकरण पवित्रता की प्रतिभा में परणित हो जाता है। तो विचार आता रहता है भगवान् राम प्रातःकालीन जब याग करते तो उनका उपदेश प्रारम्भ होता और उपदेश मञ्जरी में यही कहा करते कि देखो हमारा राष्ट्र सुगन्ध में देखो अयोध्या हमारा सुगन्ध और याज्ञिक होना चाहिए। नाना प्रकार के याग में मेरी पुत्रियाँ पुत्रेष्टी याग में पारायण हों और मुनिवरो ! देखो मानो ब्राह्मण कर्मकाण्ड में ऊर्ध्वा में गमन करने वाले हों और मानो देखो होताजन हुत दे करके मानो देखो यजमान की वाणी को पवित्र बनाते हों। ऐसा जो वेद में मानो नाना प्रकार का विचार और वेदमन्त्रों में आता रहा है तो इसके ऊपर मानव को विचार-विनिमय करना चाहिए।

सुविचार व सुआचरण

मेरे प्यारे ! देखो मैं विशेष चर्चा तुम्हें नहीं देने आया हूँ केवल परिचय यह है कि क्या हम मुनिवरो ! देखो अपने यागाम् भूतम ब्रह्मा यह जो परमात्मा का संसार रूपी जो यज्ञशाला है इस यज्ञशाला में प्रत्येक प्राणी याग कर रहा है। यदि हमारे अन्तःकरण में यह भरण हो जाये क्या हमारे सुविचार बन जायें और सुआचरणों में परणित हो जायें तो मानो देखो हमारा राष्ट्र और समाज दोनों ऊँचे बन जाते हैं। हमारा गृहपत्य नाम की अग्नि भी सिद्ध हो जाती है, गार्हपत्य नाम की अग्नि भी सिद्ध हो जाती है, और वैश्वानर नाम की अग्नि में भी हम प्रवेश हो करके देखो गार्हपत्य में अपने को प्रारम्भिक जीवन को लगा देते हैं। तो इस प्रकार अग्नियों का चयन करने वाला मानो देखो अग्नि का ही चयन करता है, परमात्मा के समीप जाने के लिए उसकी मानो प्रायः इच्छा बनी रहती है। तो आज मैं विशेष चर्चा तो

नहीं दूँगा केवल ये कि हम अपने में देखो अपनेपन को जानते रहें और देखो परमपिता परमात्मा का जो वेदमन्त्र है उसका जो ऊर्ध्वा मुख है उसे अपने में प्रायः हम धरण करते रहें और देखो एक दूसरे के प्राणों की प्रायः वह परमपिता परमात्मा रक्षा करता है, विष्णु है। तो इसीलिए बाह्य जगत को जान करके और आन्तरिक जगत में प्रवेश करके जब आत्मा को अपना साक्षी बनाते हुए परमात्मा के समीप पहुँचो। जहाँ तुम्हें प्रकाश की प्राप्ति हो जाये और मृत्यु का तुम्हें भय नहीं रहेगा। तुम मृत्यु से उपरामता को प्राप्त हो जाओगे, द्रव्य की लोलुपता में भी तुम्हारा इतना जन जीवन नहीं जायेगा तो तुम अपने को अपनेपन में प्रवेश कर जाओगे।

तो मेरे प्यारे ! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ केवल ये कि हमारे यहाँ सुविचार होने चाहिए। मेरी प्यारी माताएँ जब इस वेद की विद्या का अध्ययन करें तो मुनिवरो ! देखो उसमें सन्तानों को महानता का जन्म प्रदान कर देती हैं। मैंने तुम्हें कई कालों में नाना ऋषि-मुनियों की चर्चाएँ की हैं, उनके क्रियाकलापों की भी चर्चाएँ की हैं। आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ मानो देखो आज हम ब्रह्मा व्रते। अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे। आज का वाक् केवल हमारा ये कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए मानो परमपिता परमात्मा के समीप जाने का प्रयास करें। मानो याग हमें ये ही प्रेरणा देता क्या हम सुविचार बना करके, स्वाहा कह करके मानो देखो हम इस अन्तरिक्ष को अपने में भरण कर जाएँ और वायु मण्डल मानो जो हमारा अंग-संग रहने वाला जगत है वह सु से मानो परिपक्व हो जाए, वह भरण हो जाए। जिससे मानवीयत्व उसमें पवित्रतता को धारण करता रहे। तो आज का विचार विनिमय क्या आज मैं केवल तुम्हें यह वाक् इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ क्या हमारा मानवीयत्व अपने में ऊर्ध्वा में गमन करना चाहिए चाहे वह प्रजा हो, चाहे राजा हो, चाहे मानो देखो किसी भी प्रकार का अवृत करने वाला प्राणी हो परन्तु उसके

हृदय में मानवता होनी चाहिए यदि मानवता नहीं है तो वह मानो देखो वह केवल शरीर से मानव है परन्तु देखो कर्म से मानव नहीं रहेगा इसलिए संसार में विकृतता आ जाएगी। तो आज का हमारा वेदमन्त्र यह उद्गीत गाता हुआ अब मैं मानो देखो महानन्द जी से जैसा सदैव इनका विचार रहता है।

पूज्य महर्षि महानन्द मुनि जी के उद्गार

ओ३म् देवाम् भूतम् भविवर्णश्चतमा वायु रथाः।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे और प्रायः हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे हम राम की यज्ञशाला में विद्यमान हों और राम के मुख से इन वाक्यों को श्रवण कर रहे हों। ऐसा इनका गागर में सागर की कल्पना करते रहते हैं। परन्तु देखो आज मैं कोई विशेष चर्चा नहीं केवल यह कि आज जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है वहाँ एक याग सम्पन्न हुआ है और वह याग ऐसे पर्व के समय पर याग सम्पन्न हुआ उसको हम श्रावणी पर्व के नामों से वर्णन करते रहते हैं। मानो देखो हमारे यहाँ ऐसा विचार बना रहा है कि देखो इस पूर्णिमा के अवसर पर, इस पर्व पर मानो देखो रक्षा का यह प्रतीक माना गया है।

सूत्र की महत्ता

मेरी पुत्रियाँ मानो अपने को मानो विधाताओं के एक मानो देखो कर्म अमृतम, सूत्र का उसमें सूत्रित करती रही हैं और परम्परागतों से मेरी पुत्रियाँ अपने विधाताओं की आयु की कामना करती रही हैं कि इसमें मेरा आयु वाला बने और मानो देखो वह बन्धन अपने में देखो अपनी रक्षा का और देखो समाज के कर्त्तव्यों का एक बन्धन मानो देखो बन्धन सूत्र उसमें सूत्रित करती रही हैं। मैं मानो देखो बहुत से वाक्यम ब्रह्मा—जब देखो महाभारत के काल में जब अभिमन्यु संग्राम के लिए जाने लगे तो महारानी कुन्ती ने भी मानो देखो एक

सूत्र उनके भुजाओं में कटिबद्ध कर दिया था और यह कहा था कि जब तक ये तुम्हारा सूत्र बना रहेगा जब तक तुम्हें कोई नष्ट नहीं करेगा। इतना संकल्पमयी वह सूत्र बना हुआ था तो वह जब तक मानो देखो वह संग्राम में गये तो संग्राम में जा करके दुर्योधन ने ये कहा था कि हे पुत्र तुम्हारे मानो देखो यह भुजों में जो सूत्र बन्धन है यह जब तक यह रहेगा जब तक तुम्हारे समीप नहीं आ सकेंगे। तो मानो देखो अमृतम् उस सूत्र को सबसे प्रथम देखो जयद्रथ ने नष्ट कर दिया था और उस सूत्र के नष्ट होते ही वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। तो परिणाम यह कि मेरी पुत्रियाँ, मेरी माताएँ यह सूत्र बन्धन इसलिए की आयु इनका दीर्घ बने और कर्त्तव्य का पालन करें। इन भुजों से किसी प्रकार का मानो अन्याय, देखो न्याय युक्त रहने चाहिए। यह दूसरों की रक्षा के लिए होने चाहिए, दूसरों को नष्ट करने के लिए भुज नहीं होने चाहिए। यह भुज देखो रक्षा का एक सूत्र है और यह सूत्र परम्परागतों से वैदिक पाण्डित्व मानो देखो पुरोहितजन अपने मानो देखो अपने में अपने अमृतम् देखो यजमानों को वह सूत्र में सूत्रित करते रहें। **इस दिवस मानो देखो ऐसे ही यह दिवस वह है जहाँ वेद का प्रारम्भ हुआ था, जहाँ वेद की शिक्षा का प्रारम्भ हुआ—यह श्रावणी पर्व कहलाता है।**

पर्व की विवेचना

श्रावणी पर्व का अभिप्रायः यह है क्या देखो वह वर्षा काल का समापन होना और मानो देखो दूसरी ऋतु का प्रारम्भ होना और प्रारम्भ होने के पश्चात् अमब्रहे यह वर्षा काल का कोई-कोई मध्य भी स्वीकार करता है। यह मध्य भी इसको कहा जाता है परन्तु देखो यह मध्य में जैसे परमपिता परमात्मा देखो मेघों के द्वारा मानो देखो वायु अपने प्राण रूपी वज्र से नाना प्रकार के देखो खनिज पदार्थ और खाद्यों की रक्षा होती रहती है इसी प्रकार यह पर्व है कि इससे देखो बुद्धिमान अपने पुरोहित की भी रक्षा करता रहे, और पुरोहित यजमान की रक्षा करता रहे, ज्ञान देता रहे जिससे समाज में कुरीति न आ

जाएं और राष्ट्र को भी चाहिए कि वह अपने गृह में याग और राष्ट्र में देखो **अश्वमेघ याग भी प्रायः देखो इसी पर्व पर प्रारम्भ हुआ करते हैं।**

मुझे स्मरण आता रहता है एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब मानो देखो याग होते थे। यागों की राजाओं में प्रायः यह प्रथा बनी रही तो देखो राजा रघु के यहाँ एक याग हुआ वह श्रावणी पर्व पर मानो प्रायः पंडित जनाः वेद के मर्म को जानने वाले पाण्डित्व सर्वत्र मानो देखो वह राजाओं के यहाँ जा करके याग की घोषणा करते। कहीं अश्वमेघ-याग, कहीं मानो देखो वृष्टियाग का चलन होता रहा है क्योंकि याग ही यह रक्षार्थी बना रहता है। राजा के राष्ट्र में प्रदूषण नहीं होना चाहिए यदि समाज में प्रदूषण आ गया है और राजा के राष्ट्र में कर्त्तव्य की भी हीनता आ गई है तो एक मानव, मानव के रक्त का पिपासी बन जाता है और राजा के राष्ट्र में मानो देखो कर्त्तव्यवाद की हीनता हो जाती है। इसलिए राजा को चाहिए क्या समय-समय पर वह अश्वमेघ-याग करता रहे और वह प्रजा को नाना प्रकार की ब्रह्मज्ञान की शिक्षा देता रहे। देखो वह पुरोहित के द्वारा देखो यह सूत्र इसी प्रकार देखो राजा जब अपने राष्ट्र में यह घोषणा करता है कि हे प्रजाओं, हे ब्राह्मणजनों आओ तुम सदनम ब्रह्मा वर्णस्सुते देवाम् तुम इस वेदमन्त्र को विचारो। वेदमन्त्र कहता है कि जहाँ यह सूत्रों में सूत्रित किया जाता है वहाँ यह तीन बन्धनों में देखो वह यज्ञोपवीत में इसको बद्ध कर दिया गया है और यज्ञोपवीत में मानो देखो तीन प्रकार के ऋणों से मानव को संकेत करता रहता है। सबसे प्रथम मानो देखो मातृ-ऋण है, ऋषि-ऋण है, और देव-ऋण कहलाता है। मानव देवताओं के लिए याग करता है जिससे देवता मानो अग्नि को मुख बना करके और देवा देवानाम मुखारम ब्रह्मे व्रतम अग्नि और वह देवताओं का जो मुख है वो अग्नि उसमें हुत करता है तो इससे देवता प्रसन्न होते हैं। जड़ और चैतन्य दोनों प्रसन्न होते हैं और द्वितीय मानो पितृयाग अमृहे देखो पितृ-ऋण है तो पितृ हमारे लिए

जो क्रियाकलाप करते हैं और **पितरों का जो शुद्धिकरण किया हुआ संसार है उसको अग्रणीय बनाना यह हमारा कर्त्तव्य है** और मानो देखो ऋषि-ऋण जिन मुनियों ने आध्यात्मिकवाद में प्रवेश किया है और आध्यात्मिकवाद में प्रवेश होते हुए आध्यात्मिकवाद को आत्मा से परमात्मा तक और परमात्मा को आत्मा में और आत्मा को मनस्तत्त्व प्राणत्व की पुट लगा करके यह पंचीभूतों को जानना मानो देखो **यह ऋषि-ऋण कहलाता है।**

मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से विशेष चर्चा प्रगट करने तो नहीं परन्तु यह आधुनिक काल में तो देखो धर्मम ब्रह्मणा वर्णस्सुते आधुनिक काल में तो धर्म की यह पुकार बनी हुई है। प्रायः वास्तव में कि **आधुनिक काल में जो समाज यह चल रहा है न तो यह धर्म को ही जानता है और न यह अधर्म को ही जानता है परन्तु यह स्वार्थपरता में अपने को ले जाता जा रहा है।** मैं आधुनिक काल में जब प्रवेश करता हूँ तो मुझे अन्धकार दृष्टिपात आता है। समाज का जो अग्रणीय जीवन है वह भविष्य मुझे अन्धकार में दृष्टिपात आता रहता है। मैं यह स्वीकार करता रहता हूँ आधुनिक काल में या तो कोई राजा नहीं है और राजा मानो देखो हम किसी को स्वीकार भी कर लेते हैं तो वह समाज की मानो देखो इस समाज को वह प्रसन्न करना चाहता है और वह कर्त्तव्यवाद में समाज को न ले जाता हुआ केवल अधिकार की पुकार हो रही है और वह अधिकार इतना बलवती आ गया है कि अधिकार कोई भी मानव देखो इस को अब तक पूर्ण नहीं कर सका है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक कोई भी राजा हो वह प्रजा की मानो देखो अधिकार की इच्छा पूर्ण नहीं कर सका है। कर्त्तव्यवाद में जब राजा और प्रजा दोनों एक दूसरे में तत्पर हो जाते हैं तो कर्त्तव्यवाद में आ करके मानव अपने में मौन हो जाता है। कर्त्तव्यवाद में परमात्मा की प्रतिभा में रत्त हो जाता है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहता रहता हूँ कि आधुनिक काल का जो समाज है यदि वह कर्त्तव्य से

विहिन हो गया है और वह मानो देखो वह अप्रतम वह पुकार कर रहा है अधिकार की और अधिकार चाहता है, अधिकार में ही देखो अपने को रत्त कर रहा है। सुरा सुन्दरी में रत्त हो करके अपने आहार अपने उदर की पूर्ति में लगा हुआ है। तो यह क्या है? इसको मैं यह कर्त्तव्यवाद नहीं कहा करता इसको अकर्त्तव्यवाद अधिकार कहा जाता है। अधिकार को कोई भी पूर्ण नहीं कर सका है। मैं जब राजा रावण के काल में जाता हूँ तो प्राय देखो राजा रावण के काल में भी अधिकार की पुकार होने लगी थी। राजा रावण का काल भी उस समय अग्नि का काण्ड बन करके रह गया था। यही दशा इस समय वर्तमान काल में भी मानो देखो प्रत्येक स्थलियों पर अग्नि के काण्डों का केवल अभिप्राय यह है क्या कर्त्तव्यवाद नहीं रहा है। कर्त्तव्यवाद की हीनता आ रही है, अधिकार की पुकार पे पुकार होती चली आ रही है और अधिकार को कोई भी मानव अब तक पूर्ण नहीं कर सका है जब तक मानव कर्त्तव्यवाद में परणित नहीं होगा।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मैं देखो विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि आधुनिक ये वर्तमान में देखो आज का वो जो पर्व है जिस पर्व पे देखो ब्रह्म ब्रव्हे अंगिरस ऋषि के मानो देखो महापिता **ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने जब वेद के मन्त्रों का उद्गीत गाया था यह आज का वही दिवस है, वही पर्व है** जो परम्परागतों से पूर्णिमा के द्वारा और चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओं से युक्त हो करके और वह गान गाता है, वह अमृत देता है। इसी प्रकार देखो वेद को जानने वाला वैदिक ज्ञान में प्रवेश करता है। राजा और प्रजा मिल करके देखो अपने जीवन में एक अमृत को प्रदान करते रहते हैं। यह आज का वही दिवस है जब देखो महर्षि अथर्वा ने, ब्रह्मा के ज्येष्ठ पुत्र ने वेदमन्त्रों का उद्गीत गाया गया था और वेदमन्त्रों में सामाम भूतम देखो परमात्मा के समीप विद्यमान हो करके वेदमन्त्रों का उद्गीत गाने का प्रयास किया। और वही वेदमन्त्र मानो देखो अपने में महान हैं। मैंने तुम्हें कई कालों में वर्णन किया था कि ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से

ले करके और मानो अंगिरस ऋषि और दद्दडीय गोत्र, हरितत गोत्र देखो उद्दालक गोत्रों में भी इस प्रकार की प्रायः प्रथा बनी रही है और देखो वशिष्ठ गोत्रों में भी भारद्वाज इत्यादियों में विज्ञान की पुकार होती चली आई है। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को तो भलीभाँति प्रतीत है मैं इस साहित्य में नहीं जाना चाहता हूँ केवल यह कि आधुनिक काल का वर्तमान में जो पर्व है यह पूर्णिमा का दिवस है जब चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त हो करके रात्रि को, अपने अन्धकार को अपने गर्भ में धारण करके देखो वह प्रकाश का पुञ्ज बन जाता है और वह अमृत देता रहता है। वनस्पतियाँ उसे अपने में सहायतार्थ जीवन को पान करती रहती हैं वह कर्त्तव्यवाद कहा जाता है।

परन्तु देखो इसी प्रकार मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से मैंने कई कालों में यह वर्णन करते हुए कहा है क्या यह जो समाज की पुणावृति असुते पुनरुक्तियाँ जीवन में आती रहती हैं यह केवल उसकी प्रतिभा से बनी रहती हैं और आधुनिक काल का जो जगत है मैं विशेष नहीं, आधुनिक काल में यह समाज कहीं चला जाये, रक्त का पात्र बन जाये परन्तु अपने पद की लोलुपता न चली जाये ऐसा मानो देखो आधुनिक काल का समाज बन चुका है। कर्त्तव्यवाद न रहने से अकर्त्तव्यवाद में ही देखो अपने को परणित करता जा रहा है।

यजमान को आशीर्वाद

आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि मैं अपने यजमान के सम्मुख जाता हूँ कि यह जो वर्तमान का काल है जहाँ मैं इसे वर्तमान का काल मानो जहाँ सुरा और सुन्दरी में और देखो वह आहार और व्यवहार में जो समाज नष्ट होता जा रहा है यह वास्तव में वाम मार्ग का काल है। यह काल इसको मैं प्रिय काल नहीं कहा करता हूँ। परन्तु विचार विनिमय केवल यह कि मैं आधुनिक काल में जो जिस गृह में जिस यजमान का द्रव्य में

सदुपयोगता आ गई अपने में सदुपयोग करता है मैं उस यजमान को अपना देखो हृदय से अपनी सत्यकामना देने आया हूँ। हे यजमान तेरे जीवन का प्रायः सौभाग्य अखण्ड बना रहे क्योंकि तेरे जीवन में सदैव द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। जिस मानव के द्रव्य का सदुपयोग होता है वह मानव भाग्यशाली कहलाते हैं वह मानव अपने में कर्मठ कहलाते हैं। जिस गृह में द्रव्य का दुरुपयोग होता है, सुरा और सुन्दरी में द्रव्य चला जाता है वह मानव दुर्भागी कहलाता है।

समाज व राष्ट्र के लिए प्रेरणा

इसीलिए मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से नाना प्रकार के विषयों की चर्चा न देता हुआ केवल यह कि देखो अमृतम ब्रव्हे, प्रत्येक गृह में जैसे भगवान् राम का कथन है प्रत्येक गृह में सुगन्धि होनी चाहिए। सबसे प्रथम साकल्य की सुगन्धि जो अग्नि के मुख में देखो जड़ देवताओं की पूजा होती है और द्वितीय अपने विचारों की सुगन्धि प्रत्येक गृह में। प्रत्येक मानव, देखो माता-पिता सर्वत्र अपने गृह में विद्यमान हो करके दर्शनों का स्वाध्याय करना चाहिए। दर्शनों के ऊपर विचार-विनिमय करना चाहिए, कर्त्तव्य अकर्त्तव्य के ऊपर विचार-विनिमय करना चाहिए। गृह पवित्र हो जाएं, गृह पवित्र बनेंगे तो गृह में आने वाले समाज को भी देखो गृह स्वामी बनेगा और राजा के राष्ट्र में प्रत्येक प्रजा अपने ऊपर अधिपत्य धारण करती हुई मानो देखो ब्रह्मज्ञान राजा में होना चाहिए। राजा में ईश्वर के नाम पर जब रूढ़िवाद पनप जाता है तो शान्ति चली जाती है राजा के राष्ट्र में कर्त्तव्य विज्ञान का दुरुपयोग होने लगता है। तो पुकार ही पुकार रह जाती है कर्त्तव्य नष्ट हो जाता है। और जब विज्ञान का सदुपयोग होता है तो मानव कर्त्तव्य का पालन करता है। और जब ईश्वर के नाम पर नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बन जाती है तो राजा के राष्ट्र में रक्त भरी क्रान्ति आ जाती है, समाज में रक्त भरी क्रान्तियाँ आ जाती हैं। इसीलिए मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में कहा है क्या राजा को चाहिए कि वह अपने राष्ट्र में धर्म की और देखो

शान्ति की स्थापना चाहता है तो ईश्वर के नाम पर नाना रूढ़ि नहीं होनी चाहिए। धर्म नाम भूतम ब्रह्मे इन्द्रियों के ऊपर मानवता होनी चाहिए। कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के ऊपर विचार-विनिमय राजा का होना चाहिए। तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अपने पूज्यपाद गुरुदेव को अवगत करा रहा हूँ क्या आधुनिक काल का जो समाज है वह अपने में वाममार्ग न बनता हुआ नाना प्रकार की रूढ़ियों से युक्त हो करके कर्त्तव्यवाद का पालन करता रहे और राजा को चाहिए कि ब्रह्मज्ञान में उसकी निष्ठा होनी चाहिए। उसकी निष्ठा जब ब्रह्मज्ञान में होती है तो प्रजा भी ब्रह्मज्ञान को अपने में धारण करने लगती है।

यह पर्व अमृत है

आज का विचार विनिमय क्या मैं आधुनिक काल के उस पर्व की चर्चा कर रहा हूँ जो सृष्टि के प्रारम्भ से पर्व चला आ रहा है मानवीय समाज में इस मानो श्रावणी पर्व का अपना बड़ा महत्त्व माना गया है। इस दिवस मानो देखो पूर्णिमा के दिवस अपने में वेदों का उदघोष करने वाले मैंने अभी-अभी कहा पूज्यपाद गुरुदेव ने भी मुझे कई काल में वर्णन कराया क्या ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने अथर्व पर स्थिर हो करके वेदों का गान गाना प्रारम्भ किया मानो देखो उनके जेठे पुत्र का नाम अथर्वा था और द्वितीय का नाम अनुव्रेतकेतु था। इसी प्रकार मानो उनके कुछ पुत्र थे और वही वंशल्ज मानो देखो अंगिरा, अंगिरस और आदित्य इत्यादि ऋषियों में विभक्त होता रहा और यही फिर नाना प्रकार के गोत्रों में गोत्रित होता रहा है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो सर्वत्र जानते हुए इन साहित्य चर्चाओं में केवल नहीं विचार विनिमय केवल यह क्या आधुनिक काल का यह जो पूर्णिमा दिवस है यह पर्व है और यह अमृत है मानो देखो यही तो हमारे यहाँ एक श्रावणी पर्व कहा जाता है। श्रावणी कहते हैं जहाँ यह पृथ्वी अपने गर्भ से परिपक्व होती है और परिपक्व होते ये अपने गर्भ में नाना वनस्पतियों को अपने में सजातीय बना लेती है और सजातीय बना करके मेघ मण्डलों से पुकार होती है वह वृष्टि प्रारम्भ

होती है और वृष्टि में देखो जो दूषित पृथ्वी की आभा में देखो याग अपने में संचित करता है इसीलिए श्रावणी पर्व पर सब ऋषि मुनि और गृह में राजा महाराजा सब याग में अपने को परणित करते रहे हैं। तो आज का विचार-विनिमय क्या मैं केवल विशेष चर्चा नहीं, विचार केवल यह कि मानव को अपने कर्त्तव्य में निहित होना चाहिए, द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। हे यजमान तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, जीवन की प्रतिभा महान बनी रहे और द्रव्य का सदुपयोग होता रहे ऐसा मेरा सदैव विचार रहता है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

पूज्यपाद-गुरुदेव

मेरे प्यारे ! ऋषिवर अभी-अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने बड़े भव्य विचार और सामाजिक और लौकिकवाद में जाने के लिए इन्होंने अपना मन्तव्य दिया। राष्ट्रवाद कैसे ऊँचा बनता है और विज्ञान का प्रायः दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। तो ऐसा इन्होंने अपना विचार दिया है। **आज का हमारे वाक्यों का अभिप्राय ये क्या प्रत्येक मानव को अपने में याज्ञिक होना चाहिए। प्रत्येक मानव, मानव में प्रवेश होता रहे, समाज को ऊँचा बनाता रहे।** यह आज का वाक् अब सम्पन्न होने जा रहा है कल समय मिलेगा तो शेष चर्चाएँ प्रगट करेंगे। आज के वाक् उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जायें। यह है आज का हमारा वाक्। अब समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूँगा।

ओ३म् देवाः आभ्याम् रथम माऽम प्राची रथम मनु आपाऽम्ः।

दिनाँक : 13 अगस्त, 1992

समय : दोपहर 12 बजे

स्थान : लाक्षागृह, बरनावा

॥ ओ३म् ॥

मानवता

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान और विज्ञान है वह इतना नितान्त माना गया है कि मानव जब उसके ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ करने लगता है तो नाना प्रकार की आभाएँ मानव के समीप आना प्रारम्भ हो जाती हैं। आज का हमारा वेद का ऋषि क्या कह रहा है? वेद का आचार्य कह रहा है कि "ममं वृतं देवाः मम वाचां दिव्यं देवो हरणयम् गच्छाः।" वेद का ऋषि यह कहता है कि हे मानव ! **तू अपनी मानवता को जानने का अवश्य प्रयास कर।** प्रत्येक मानव की एक आकांक्षा बनी रहती है कि मेरी मानवता बहुत ऊर्ध्व गति में जाने वाली हो और मैं मानव क्षेत्र में रमण करने वाला बनूँ। प्रत्येक मानव अपनी सम्पदा को ऊँचा बनाना चाहता है। राष्ट्रीयता में क्या, मानवता में क्या, सामाजिक विचारधारा को एक महान् क्षेत्र में ले जाना चाहता है। वेद का ऋषि भी यही कहता है कि प्रत्येक मानव को अपनी मानवता पर विचार विनिमय करना चाहिए। **मानव कौन है, जो मननशील कहलाता है।** जो सँसार में मननशील प्राणी नहीं होता, मनन नहीं कर पाता, वह मानव, मानव नहीं कहलाता।

मन की विवेचना

इसलिए वेद का ऋषि कहता है कि हे मानव ! तू मननशील

बन। मन के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ कर कि यह मन क्या वस्तु है? जब मन के ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ करने लगता है कि यह मन क्या है? तो वेद का ऋषि कहता है "वाचं ब्रह्म लोकाः हिरण्यम् वृहे कृत्यं मनो वाचाः। वेद का ऋषि यह कहता है कि यह मन क्या वस्तु है? जो सँसार का विभाजन कर देता है। मन्त्रणा करने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह मन रसों का विभाजन कर देता है। लोक लोकान्तरों को नाना रूपों में दृष्टिपात करा देता है। अपने कुटुम्ब को नाना प्रकार के रूपों में दृष्टिपात कराने लगता है? यह मन क्या है? **वेद का ऋषि कहता है कि हे मानव ! यह जो मन है यह प्रकृति का सबसे सूक्ष्म तन्तु कहलाता है।** इसका कार्य ही यह है कि यह सँसार का विभाजन करता है। प्रत्येक प्राणी के विचार का विभाजन कराने वाला है। इन विचार धाराओं को ले करके जब मानव इस मन को विचारने लगता है तो मन की उड़ान उड़ता हुआ मानव कहाँ चला जाता है? पृथ्वी के गर्भ में परणित हो जाता है। उसके धर्म को विचारने लगता है कि वह धर्म क्या है? जो सार्वभौम है?

मेरे प्यारे ! विचारक कहता है कि धर्म वह है जिसको यह पृथ्वी अपने गर्भ में धारण कर रही है। **बेटा ! यह पृथ्वी जिसको धारण कर रही है उसी का नाम मानो धर्म कहलाया जाता है।** यह पृथ्वी क्या-क्या धारण कर रही है? यह कहीं खाद्य वस्तुओं को धारण कर रही है। कहीं खनिज वस्तुओं को धारण कर रही है। नाना प्रकार के रत्न इत्यादियों को यह अपने में धारण कर रही है। **जो धारण कर रही है उसी का नाम तो धर्म है।** इसी प्रकार हे मानव ! तू जब अपने मन को विचार विनिमय करता हुआ उड़ान उड़ता है तो जैसे यह महान् वसुन्धरा नाना प्रकार की वस्तुओं को अपने में धारण कर रही है और जो मानव चाहता है वह सँकल्प से उसे प्रदान कर रही है। **हे मानव ! तेरा भी धर्म वही है जो तू अपने मन में धारण कर लेता है।** परन्तु मन में क्या वस्तु धारण करता है जो विज्ञानमय मानवता में मानो अहिंसा में

एक तत्पर हो जाते हैं। उसका नाम मानो धर्म कहलाता है। मेरे पुत्रो ! जिस विचारधारा में विज्ञान नहीं होता, मननशीलता नहीं होती, नम्रता नहीं होती, जिस वाणी में सँयम नहीं होता वह मानव धर्म से दूर रहता है। तो मानव को अपने धर्म को विचारना चाहिए।

पुत्रो ! मुझे बहुत काल की वार्ता स्मरण आती रहती है जब ऋषि मुनि मानव धर्म के ऊपर विचार विनिमय करते। **मानव किसे कहते हैं जो मानव अपने मन के ऊपर विचार करने लगता है।** यह मन क्या है? जो द्वितीय भाव को उत्पन्न करने वाला है। सूर्य चन्द्रमा दोनों का पृथक-पृथक दृष्टिपात कराता है। जो सँसार की नाना वस्तुओं की उड़ान उड़ता हुआ जो लोकों की यात्रा करता है। यह मन ही तो है जो परमाणुवाद को जानता है। यह मन ही तो है जो अन्तरिक्ष में वाणी को जानता है कि वाणी के साथ में जो चित्र रमण कर रहे हैं। यह मन कैसा विचित्र है, उन्हीं नेत्रों से मन की तरंगों से माता को दृष्टिपात कर रहा है। उसी से एक पुत्री को दृष्टिपात कर रहा है, चित्त पर उसी प्रकार के पटल आने प्रारम्भ हो जाते हैं।

मुनिवरो ! मानवता पर मैं तुम्हें एक महान् ऋषि मुनियों की चर्चा प्रकट करने जाऊँगा। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में महाराजा अश्वपति राष्ट्र का निर्माण करने लगे। राष्ट्र की पद्धति को निर्धारण करने लगे। भगवान् मनु के विचारों को ले करके तो महाराजा अश्वपति ने नाना ऋषि मुनियों को निमन्त्रण दिया। सर्व ऋषि उस सभा में विराजमान हुए। जिसमें महर्षि शौनक मुनि, महाराजा के राज पुरोहित कहलाते थे। इसमें महर्षि **चाक्राणी भी थे** और भी नाना ऋषियों का एक सम्मेलन हुआ। विचार-धारा प्रारम्भ हुई। राजा ने यह कहा कि हे मुनियों ! हे तपस्वियो ! मैं अपने राष्ट्र को ऐसा बनाना चाहता हूँ जिससे मेरे राष्ट्र में मानवता आ जाए और मानव उसे कहते हैं जो सँसार में एक दूसरे का ऋणी न हो। **मानव कौन है जो ऋणी न हो।** तो राजा कहता है

कि मैं अपने राष्ट्र में यह चाहता हूँ कि मेरे राष्ट्र में एक दूसरे का कोई भी मानव ऋणी नहीं रहना चाहिए। ऐसी पद्धति को मैं अपने समाज में लाना चाहता हूँ उस पद्धति का मुझे निर्णय कराइए।

मेरे पुत्रो ! कहा जाता है कि महाराजा अश्वपति के प्रश्न पर महर्षि शौनक, महर्षि सोमयोवृत केतु आदि ऋषियों ने यह कहा कि हे राजन् ! क्या तुम चाहते हो कि एक दूसरे का कोई मानव ऋणी न रहे, तो राजन ! तुम्हें प्रतीत है कि **ऋण कितने प्रकार के होते हैं?** राजा ने कहा कि प्रभु ! यही तो मैं जानना चाहता हूँ। **ऋषियों ने निर्णय कराया कि मानव जब इस सँसार में आता है तो नाना प्रकार का ऋण लेकर के आता है।** सबसे प्रथम उसके द्वारा देव ऋण है और द्वितीय मातृ ऋण है और तृतीय सामाजिक अस्वत ऋण कहलाया जाता है, आचार्य ऋण कहलाया जाता है, यह तीन प्रकार के ऋण तो मानव के मौलिक ऋण कहलाए जाते हैं।

देव-ऋण

सबसे प्रथम है देव ऋण। देव ऋण किसे कहते हैं? जिन देवताओं की सहकारिता से इस मानव शरीर का निर्माण हुआ वह देवता है। देवता कौन? जिससे मानव का यह जीवन चल रहा है। वह कौन देवता है? वे जड़ देवता है मानो वे पँच महाभूत हैं, पँच **महाभूतों के परमाणुओं से इस मानव शरीर का निर्माण होता है** तो उन पँच महाभूतों का ऋण है हमारे द्वारा। हम उनके ऋण के ऋणी हैं। क्योंकि उनकी सहकारिता से बने हैं। जैसे सूर्य हमें प्रकाश देता है, प्रातःकाल में उदय होकर वह प्रकाश देता रहता है। उस प्रकाश को ले करके मानवता को प्राप्त होते हैं। सूर्य किसी रूढ़िवाद के लिए नहीं होता, वह उसका धर्म है। **इसी प्रकार जो ज्ञान है जिससे मानवता आती है वह सूर्य से भी ऊँचा एक प्रकाश है।**

मेरे प्यारे ! **प्रकाश कितने प्रकार के होते हैं?** एक प्रकाश वह है जो सूर्य का प्रकाश आ करके समुद्रों को तपाता है और

समुद्रों को तपा करके जल का उत्थान हो करके धीमी-धीमी वृष्टि करता है और वृष्टि करके नाना खाद्य खनिज पदार्थों की उत्पत्ति हो जाती है। वह एक रूढ़ि के लिए नहीं है। वह मानवता के लिए है। कोई भी प्राणी जिस शरीर में मन और प्राण हैं उनके लिए वह वृष्टि होती है। इसी प्रकार मानव का जो ज्ञान है, मानव की जो उड़ान है, सूर्य के विज्ञान की चर्चा प्रकट कर रहा है, सूर्य का प्रकाश ऐसे आता है, वनस्पतियों से रश्मियाँ ऐसे आती हैं। जब वे वायु छू-छू करके आती हैं तो वह जो प्रकाश है, वह जो वेद का प्रकाश है वह प्रत्येक मानव के अन्तःकरण को ऐसे प्रकाशित कर देता है जैसे प्रातःकाल का सूर्य रात्रि को अपने में निगल जाता है और **वेद का प्रकाश होते ही अज्ञान निगला जाता है।** पर वह रूढ़िवाद की वार्ता क्यों उच्चारण करता है अपने मुखारबिन्दु से? इससे सिद्ध होता है कि वह वेद को नहीं जानता है। वेद को जानने वाला सर्व धर्मों की चर्चा क्यों कर रहा है? सर्वधर्म केवल एक ही धर्म होता है सँसार में।

सर्वधर्म किसे कहते हैं? मेरे प्यारे महानन्द जी मुझे यह प्रेरणा दे रहे हैं कि आज सर्वधर्म सम्मेलन पर अपनी विचारधारा दीजिए। परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि सर्वधर्म क्या वस्तु है? सबका धर्म मानो एक ही धर्म होता है और वह धर्म क्या है? वह मानवता है। **धर्म सबका एक है।** फिर सर्व धर्म की विचारधारा यह कैसे उत्पन्न हुई? इसके गर्भ में अभिमान होता है। हे मानव ! जब तक तू इस अभिमान को शान्त नहीं करता, तू वेद के प्रकाश को प्राप्त नहीं कर सकता। वेद का ऋषि यह कहता है कि वेद को जानने वाले का हृदय तो सूर्य के सृदश है। उसके पटल पर जो ज्ञान है वह ईश्वर का ज्ञान है। ईश्वर सर्वत्र एक-एक कण में व्याप्त रहने वाला है। इस प्रकार की विचारधारा मानवीय मस्तिष्कों में होनी चाहिए। हमारा धर्म क्या है? **धर्म केवल ईश्वरीय धर्म है।** ईश्वर को धारण करना और उसके पाँच महाभूतों का जो प्रसारण हो रहा है मानो वह जो ऋण ले करके सँसार में आए हैं वह

सबका एक ही होता है। हम सँसार में दुर्गन्धि करने के लिए नहीं आए, हम सुगन्धि देने के लिए आए हैं

सुगन्धि क्या है? दुर्गन्धि क्या है? इसके ऊपर चिन्तन किया जाए। सुगन्धि वह कहलाती है जिसका हृदय नम्र होता है। सुगन्धि वह कहलाती है जिसके द्वारा 'अहिंसा परमोधर्मः', होता है, सुगन्धि वह कहलाती है जिसके अन्तःकरण के विचारों को श्रवण करने वाले सर्पराज और मृगराज और सिंहराज चरणों में ओत-प्रोत हो जाते हैं। वह मानवीय सुगन्धि कहलाती है। दुर्गन्धि वह कहलाती है जिसके अन्तःकरण में द्वितीय भाव होता है। दुरिता होती है, कालिमा होती है। वह केवल दूसरों को अपने प्रभाव में लाना चाहता है। मेरे पुत्रो ! ऐसा वेद का ऋषि कहता है कि ऐसे अभिमानी प्राणी को सँसार में नष्ट कर देना चाहिए। यह वेद का ऋषि कहता है मैं नहीं कहता।

वेद के ऋषि से, एक समय महर्षि मुदग्ल ऋषि से महर्षि रेवक मुनि ने कहा कि जब परमात्मा सर्वत्र है, कण-कण में व्याप्त है, वेद का प्रकाश भी कण-कण में व्याप्त है तो **परमात्मा का आहार क्या है?** तो वेद का ऋषि कहता है कि यह जो मानव समाज है, जो अपने को मानव कहता है इस मानव के हृदय में जितना अन्धकार है-अन्धकार क्या जितना भी अभिमान है, अभिमान को परमात्मा निकालता रहता है, तो इसीलिए मेरे प्यारे ! विचारो, जो धर्म की घोषणा मैं कर रहा हूँ। परन्तु यदि मेरे हृदय में अभिमान की, कितने प्रकार के अभिमान हैं? जाति अभिमान हैं, आत्मिक अभिमान हैं, सामाजिक अभिमान हैं-जब तक मानव के हृदय में ये अभिमान हैं तब तक मानव, मानव नहीं कहलाया जाता सँसार में। यह वेद का ऋषि कहता है मैं नहीं कहता हूँ। वेद का ऋषि कहता है ''अभयं गति ब्रह्मे लोकाः'' एक समय कणाद ऋषि कणों को एकत्रित कर रहे थे और प्रभु से कहते हैं कणाद ऋषि कि प्रभु मुझे कहीं दृष्टिपात नहीं आता है। मुझे केवल मन और प्राण ही दृष्टिपात

आते हैं इतने में ही इनके गुरुदेव आ गए और गुरु ने कहा कि हे देव ! कणाद क्या विचार रहे हो? उन्होंने कहा कि प्रभु मैं यह विचार रहा हूँ कि प्रभु के राष्ट्र में मैं आपकी आज्ञा का पालन तो कर रहा हूँ परन्तु मुझे प्रभु दृष्टिपात नहीं आते। उन्होंने कहा **"प्रभु तो प्राणत्व है, जिसको तुम प्राणत्व कहते हो वही तो प्रभु है।"**

देखो ! **वेद का ऋषि प्राण पर चिन्तन करने लगा।** जब भयँकर वन में चिन्तन करते बारह वर्ष हो गए, ऋषि उड़ान उड़ रहा है, कहीं प्राणों को वह लोकों में दृष्टिपात कर रहा है, कहीं सूर्य की किरणों में दृष्टिपात कर रहा है, कहीं खनिज पदार्थों में प्राण को दृष्टिपात करता है, कहीं प्राणी मात्र को प्राण के सूत्र में बंधा हुआ दृष्टिपात कर रहा है। जब चिन्तन करते-करते बारह वर्ष हो गए तो एक समय ऋषियों का समूह आया और विचार विनिमय करते हुए यह कहने लगा कि कणाद कहाँ हैं? परन्तु जब कणाद के द्वार पर पहुँचे तो उन जिज्ञासुओं ने चरणों को स्पर्श करके कहा कि प्रभु अपना अनुभव प्रकट कीजिए। **ऋषि कणाद कहता है** कि मैं क्या उच्चारण करूँ? यह जो प्रभु का जगत है, जिसमें मानव अभिमानी बना रहता है, एक प्राणी दूसरे प्राणी को नष्ट करने के लिए विचार बनाता रहता है परन्तु मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ, मेरा वेद का मन्त्र यह कहता है कि प्रभु का इतना विशाल विज्ञान है। विचार विनिमय करने के लिये यदि मेरी एक हजार वर्ष, सहस्रों वर्षों की अवस्था हो तो प्रभु के विज्ञान को विचारने के लिए भी मेरी अवस्था सूक्ष्म है। हे मानव ! तू सँसार में मानवता को ला। प्रभु के राष्ट्र में कोई अभिमानी नहीं रहता। प्रभु के राष्ट्र में ममत्व नहीं होता, प्रभु के राष्ट्र में सब मानव होते हैं इसलिए मानवता की घोषणा होनी चाहिए।

महर्षि कणाद अपने बारह वर्ष के अनुभव को प्रकट कर रहा है। जहाँ मैं एक-एक प्राण को विचारता हूँ, मन और प्राण दोनों को विचारने लगता हूँ तो मेरे हृदय में, मेरी वाणी में इतने शब्द

नहीं हैं जिनमें मैं उपमा दे सकूँ। प्रभु का विज्ञान जब इतना नितान्त (अत्यधिक) है, प्रभु का राष्ट्र इतना विशाल है। अरे ! विशाल राष्ट्र में मानव तू अभिमान करके कहाँ जायेगा? किस स्थली में जायेगा?

मेरे पुत्रो ! मुझे एक वाक्य स्मरण आ गया। **जड़ भरत की चर्चाएँ** स्मरण आ गई। वह पूर्व जन्म के साकल्य मुनि थे। साकल्य मुनि महाराज अपनी स्थली पर मोक्ष के निकट जा रहे थे। परन्तु हिंसक प्राणियों ने एक हरिणी को अवरोध किया तो उसका भय के कारण उनके आश्रम में गर्भपात हो गया और जब गर्भपात हो गया तो हरिणी भयभीत हो करके आगे चली गई। साकल्य मुनि ने विचारा कि यह क्या है? तो देखा कि जरायुज में एक प्यारा पुत्र है, उसमें जल का प्रवेश किया, उसमें श्वांस आया वह जीवित हो गया। जीवित होने के पश्चात् साकल्य मुनि उस बालक को अपना अंग स्वीकार करने लगे। मोह आ गया। कहाँ से मोह जाग्रत हो गया ऋषि के हृदय में, जिस मोह को त्याग दिया था वह मोह पुनः जागरूक हो गया। वे उसका पालन करने लगे, इतना मोह हुआ कि वह पूर्व भोजन करे उसके पश्चात् ऋषि भोजन करें। कुछ समय के पश्चात आयु पूर्ण होने पर हरिणी का बालक समाप्त हो गया। समाप्त हो जाने के पश्चात् ऋषि भी कुछ काल में समाप्त हो गए। समाप्त हो जाने के पश्चात् महाराजा कुवेतकेतु राजा मनु वंशज के यहाँ जन्म लिया। उनकी पत्नी का नाम शकुन्तका था। उस शकुन्तका के गर्भ में उस जीवात्मा का प्रवेश हुआ। जब उस जीवात्मा का प्रवेश हुआ, प्रवेश होते ही जहाँ माता के गर्भ-स्थल में उस समय वायु भ्रमण कर रही थी। नारकिक क्षेत्र में ऋषि का आत्मा चला गया, ऋषि को ज्ञान था। क्योंकि मोक्ष के निकट था, मोह के कारण कहाँ चला गया, वह कहता है कि प्रभु ! मुझे इस नरक से दूर कर, हे प्रभु ! मैं मानवत्व के क्षेत्र के लिए जा रहा था मैं कहाँ आ गया। प्रभु ! मुझे इससे दूर कर।

मेरे पुत्रो ! वह गर्भाशय कुछ समय के पश्चात् जरायुज बाहर आ गया सँसार में आ गया, परन्तु वह सँकल्प माता के गर्भ में से ही कर रहा है आत्मा। प्रभु ! मुझे यहाँ से दूर कर, मैं अब मोह नहीं करूँगा, सँसार में, भगवान् मैं क्रोध नहीं करूँगा। वह बालक गर्भ से दूर हो गया। दूर हो जाने के पश्चात् राजा के यहाँ आनन्द मनाए जाने लगे। पुत्र की उत्पत्ति हुई। कहीं याग हो रहे हैं, कहीं वेद-मन्त्रों का गान हो रहा है, कहीं साम गान हो रहा है तो कहीं यजूञ्शि गान हो रहा है, नाना प्रकार का गान हो रहा है। परन्तु वह भी समाप्त हुआ। ऋषि बालक की पालना होने लगी। जब बालक कुछ युवा होने लगा तो उसे किसी से मोह नहीं था। न पिता से मोह है, न राष्ट्र से मोह है, न माता से मोह। राजा ने बालक की बुद्धि की परीक्षा कराई, मस्तिष्क के नाना विशेषज्ञ आए। कोई चिकित्सा नहीं हुई। परिणाम यह कि उसे अपनी वाटिका में स्थित कर दिया। बालक ने सारी वाटिका का विनाश कर दिया। राजा ने उस बालक को कहा कि हे बालक ! तू अभागा है। जाओ मेरे राष्ट्र से दूर हो जाओ। अन्यथा तुम्हें मृत्यु का दण्ड दिया जाएगा। वह जन्म जन्मान्तरों का सँस्कारीय आत्मा घर को त्याग देता है और राष्ट्र को त्याग करके भयँकर वन में चला गया। पत्र और पुष्पों का आहार बना लिया, जड़ की भाँति रहता, आत्मा में लीन है, वह आत्मा का चिन्तन कर रहा है।

मेरे पुत्रो ! महाराजा मनु वंशज में राजा ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज दे करके यह विचारा कि जड़ भरत जैसे महापुरुष को गुरु बना करके मैं भी अपने आत्म कल्याण को चाहता हूँ। चार कहारों की पालिका में विराजमान हो करके जेठे पुत्र को राज्य दे करके राजा भयँकर बन के लिए चलने लगा। विश्वकेतु राजा भ्रमण करता हुआ वहाँ जा पहुँचा जहाँ जड़ भरत विराजमान था उससे पूर्व कहार रुग्ण हो गया। जड़ भरत को ला करके उस पालिका में नियुक्त कर दिया। वह जानता नहीं था कि पालिका को कैसे ले जाया

जाता है, कहीं नीचे कहीं ऊपर, कहीं ध्रुवा में कहीं ऊर्ध्व में। उस समय राजा को क्रोध आया कि ऐसा मूर्ख यह कौन है। इनके द्वारा दण्ड देने की एक सँहिता थी। जड़ भरत पर मानो आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। जब आक्रमण किया तो जड़ भरत शान्त हो करके आक्रमण को सहन करता रहा। राजा जब थकित हो गया तो शान्त हो गया और जड़ भरत मग्न होने लगा। राजा कहता है कि अरे ! यह क्या है? तुम मग्न क्यों हो रहे हो? उन्होंने कहा कि राजा मैं इसलिए मग्न हो रहा हूँ कि मैं अपने प्रभु से याचना कर रहा हूँ कि हे प्रभु ! मैंने तो इससे पूर्व जन्म में एक हरिणी के प्यारे पुत्र से मोह किया था। हे प्रभु यह जो तेरे राष्ट्र में मैं इतना दुःखित हुआ हूँ मोह के कारण। राजा ने मुझे दण्डित करना विचारा, विशेषज्ञों ने मुझे मूर्ख कह करके त्यागा। प्रभु ! मैं कितनी यातना सहन कर रहा हूँ। परन्तु हे प्रभु ! जो तेरे राष्ट्र में जो क्रोधी हैं, अभिमानी भी हैं और क्रोध से मुझे दण्डित कर रहे हैं, जो कामी भी हैं जब तेरे राष्ट्र में पहुँचेंगे तो उनकी क्या दशा होगी? प्रभु ! जब मोह के कारण ही मेरी यह दशा बन गई है तो उनकी क्या दशा बनेगी? तो राजा ने कहा कि प्रभु ! आप कौन हैं? जड़ भरत जान करके उनके चरणों में ओत-प्रोत हो गए। प्रभु ! मुझे क्षमा करो, मैं तो आपको गुरुत्व रूप में धारण करने के लिए आया था।

तो विचार क्या? मैं यह विचार दे रहा हूँ। **महर्षि कणाद कहता है कि प्रभु के राष्ट्र में कौन जाएगा?** मानवता के क्षेत्र में जिनके द्वारा उदारता आ जाएगी, जिसके द्वारा यौगिकता होगी। जिसके द्वारा रूढ़ि नहीं होगी। वह धर्म क्या है? मैंने पूर्व काल में कहा। **धर्म वह है जो स्वाभाविक आभा है, सुगन्धि है उसका नाम धर्म है।** मेरे पुत्र ने कई काल में प्रकट कराते हुए कहा था, आज मैं रूढ़ियों की चर्चा देने नहीं आया। महानन्द जी के विचारों से मुझे यह रूढ़ि ही प्रतीत होती है। रूढ़ि क्यों उत्पन्न हो गई हृदय में? धर्म तो धर्म ही है, **जो देवताओं की ध्वनि है उसी का नाम धर्म है।** देवताओं की ध्वनि क्या है? अग्नि की ध्वनि तेज

है, वायु की ध्वनि गति करना है, जल की जो ध्वनि है वह अमृत है, अन्तरिक्ष की जो गति है वह शब्द है, पृथ्वी से सुगन्धि आती है, दुर्गन्ध आती है, दुर्गन्ध को त्यागो सुगन्ध को लेना स्वीकार करो। तो यह जो पँच भूतों में स्वाभाविकता है अरे ! इसी को धारण करने का नाम धर्म कहलाता है। धर्म क्या वस्तु है? जो मानो अन्तरिक्ष से शब्दों का ज्ञान हो जाता है, वायु से गति करने का ज्ञान होता है। गति हम कैसे करें? अग्नि से हम तेज को लाना चाहते हैं, जल से हम अपनी रसना में रस को लाना चाहते हैं और पृथ्वी से हम क्या चाहते हैं कि पृथ्वी नाना प्रकार की यातना सह करके भी तुम्हें सुगन्धि ही देती है। नाना प्रकार की कठोरता को भी अपने में धारण करके तुम्हें खाद्य और खनिज पदार्थ प्रदान करती है। **तो हे मानव ! तेरा धर्म क्या है? तेरा धर्म है कि इन स्वाभाविक तत्वों को अपनाना ही तेरा धर्म कहलाया गया है।**

मेरे प्यारे पुत्रो ! यह परमात्मा की प्रतिभा है, परमात्मा प्रकृति से स्नेह करता है। इसी प्रकार जो प्रकृति के इन तथ्यों को जानता है, इन्हीं में परमात्मा निहित रहता है। **परमात्मा और प्रकृति दोनों को मिलान करना ही धर्म है।** इस धर्म से अपनाने वाला समाज सँसार में ऊँचा कहलाता है।

बेटा ! मैं उच्चारण करता हुआ दूर चला गया हूँ। विचार विनिमय यह प्रारम्भ हो रहा था महाराजा अश्वपति की चर्चा हो रही थी। महाराजा अश्वपति से ऋषियों ने कहा कि हमारे यहाँ सबसे प्रथम जो धर्म लाना चाहते हैं, ऋण से उऋण होना चाहते हो तो इन देवताओं को अपनाओ और देवताओं को अपना करके इनकी पूजा करो। **पूजा का अर्थ क्या है? इनका सदुपयोग करो।** जैसे अग्नि की पूजा कर रहे हैं तो अग्नि की पूजा का अर्थ क्या है कि उस अग्नि का सदुपयोग करना चाहिए। अग्नि का सदुपयोग कैसे करोगे? अग्नि के कणों को जानो। अग्नि के तथ्यों को जानने वाला

अन्तरिक्ष में से, द्यु लोक में से सूक्ष्म कणों को एकत्रित करके विद्युत को उत्पन्न कर देता है, प्रकाश ही प्रकाश को लाता है यह उसका पूजन है।

मानव का जिस कार्य के करने से मस्तिष्क में उड़ान ऊँची उड़ी जाती हो, मस्तिष्क जिससे व्यापक बनता हो वह उसकी पूजा कहलाई जाती है। इससे मानव का मस्तिष्क ऊँचा बनता है और जिससे मानव का मस्तिष्क नीचे गिरता हो वह पूजा नहीं कहलाती। वह मानो उसमें उसकी मृत्यु दृष्टिपात होती है। जैसे चाक्राणी प्रश्न कर रही है याज्ञवल्क्य से जनक की सभा में कि हृदय किसमें समाहित होता है? तो ऋषि याज्ञवल्क्य कहता है कि देवी ! यदि अधिक प्रश्न करेगी तो तेरा मस्तिष्क नीचे गिर जायेगा। अब यह प्रश्न बड़ा विचित्र था। परन्तु मस्तिष्क कैसे नीचे गिरेगा? तुम एक बुद्धिमान से प्रश्न करते रहो, एक स्थली वह आती है जहाँ प्रश्न करने पर आचार्य भी और योगी भी मौन हो जाता है। वह भी यह कहता है कि यह अनुभव का विषय है। परन्तु वह कहता है कि तुम मुझे उत्तर दो। परन्तु वह कहता है कि नहीं मुझे उत्तर दीजिए। तो देखो उसमें उसे अभिमान जागता है कि यह कैसा बुद्धिमान है? मेरे प्रश्नों का इससे उत्तर नहीं बना, तो उसे अभिमान आ गया और वह जो अभिमान है वहीं मानव का मस्तिष्क नीचे गिर जाता है। तो वह धर्म नहीं कहलाता है। वह पाप का मूल बन गया है, उसका मस्तिष्क ही नीचे गिर गया है। जब बुद्धिमानों की दृष्टि में यह आ जाता है कि यह मानव मिथ्यावादी है तो उस मानव का मस्तिष्क नीचे गिर गया। तो **चाक्राणी से याज्ञवल्क्य कहता है कि यदि तुम अधिक प्रश्न करोगी तो तुम्हारा मस्तिष्क नीचे गिर जाएगा। गिर जाने का अभिप्राय क्या है कि तुम प्रश्न करो परन्तु तुम जानो, जान करके अपने धर्म और मानवता को विचारो।**

मेरे प्यारे ! वेद का ऋषि कहता है कि **बुद्धिमान की पूजा**

क्या है? बुद्धिमान से ज्ञान लो, ज्ञान लेकर के यथोचित उसका सत्कार, आदर करो। उससे ज्ञान लेना यही उसकी पूजा कहलाएगी। अन्तरिक्ष को तुम्हें जानना है तो शब्दों का ज्ञान लो यह उसकी पूजा है। जल का पूजन करना है तो जल का उपयोग करो, जल का सदुपयोग करने का नाम उसकी पूजा है। मैं इस पूजा के ऊपर दो-दो माह उच्चारण वाक्य कर देता परन्तु अब मैं देना नहीं चाहता हूँ। पूजा का बहुत विस्तार है सँसार में। संक्षिप्त परिचय इतना ही है कि उसका सदुपयोग करने का नाम ही पूजा है। **ऋषि कहते हैं कि हे राजन्! हे महाराजा अश्वपति! तेरे राष्ट्र में प्रजा देव पूजा करने वाली हो उससे तेरे राष्ट्र का मस्तिष्क ऊँचा होगा।**

पितृ-ऋण

एक पितृ ऋण होता है। पितृ ऋण किसे कहते हैं? हमें पितरों के लिए कार्य करना है, पितरों की सेवा करनी है। पितरों की सेवा हम कैसे करेंगे? उनका ऋण है। क्योंकि माता और पिता दोनों का ऋण है। माता अपने गर्भ-स्थल में पालन कर रही है, कर्त्तव्य का पालन कर रही है, वह यह विचार कर रही है कि मेरे गर्भ-स्थल में जरायुज का पालन हो रहा है, वही उसका धर्म कहलाया है, कर्त्तव्य है उसके द्वारा। बालक जरायुज से दूर होता है, माता की लोरियों में अमृत का पान कर रहा है। माता उसकी पालना कर रही है। बालक दूर हो करके मानो उसका पालन कर रहा है। जो पितरों ने कार्य किया उस पितृ ऋण से मुझे उऋण होना है, उसी प्रकार का सुयोग्य पुत्र उत्पन्न करना है। मानो माता पिता जी हैं उनकी मुझे सेवा करनी है। सेवा का अर्थ क्या है? सेवा का अर्थ यह नहीं है कि दीपक लेकर के उनकी सेवा की जाए। **सेवा का अभिप्राय है कि उनकी जो मन की इच्छाएँ हैं, यथा शक्ति जो इच्छाएँ हैं उनको पूर्ण करने का नाम पितृ सेवा कहलाती है। यह पितृ याग कहलाता है।** पितृ क्या है? अन्तरिक्ष में चले जाते हैं वह भी पितृ हैं। पितर क्या हैं? आचार्य भी पितर हैं, पितर का अभिप्राय है

जो हमें पिता बन करके हमारे अज्ञान को समाप्त करते हैं वही पितर हैं। अज्ञान को हम समाप्त करें, ज्ञान लेकर के वह हमारा कर्त्तव्य और धर्म कहलाया गया है। हमें पितरों के द्वारा ही ले जाना है, हमें पितृ ही बनना है **इसको पितर याग कहते हैं** और यह ऋण है हम जितना भी पितरों की सेवा करेंगे, उनका आदर करेंगे उतना ही हमारे अन्तःकरण में ऊँचे-ऊँचे सँस्कारों का जन्म हो करके हम इस आवागमन के क्षेत्र से पार होते चले जायेंगे। वह इस मानव का धर्म है।

एक मेरी प्यारी माता अपने पुत्र को उत्पन्न कर रही है और उत्पन्न करके वह उसका क्षेत्र बनने लगता हैं वह समाज के द्वारा जाता है माता की लोरियों से पृथक हो करके। **हे माँ! अब मोह करना तेरा कर्त्तव्य नहीं है, पालन करना तेरा कर्त्तव्य है।** तूने अपने पुत्र का पालन किया है और पालन करके आचार्य को अर्पित कर दिया, पितरों को दे दिया है, आचार्य कुल में चला गया है, आचार्य का बन गया है। यदि वह शिक्षा से उत्तीर्ण हो करके यदि राजा बन गया तो वह समाज की सम्पदा बन गया है। यदि वही पुत्र हे माँ! ऋषि और मुनि तपस्वी बन जाता है, प्राण और मन के ऊपर उड़ान उड़ता है तो **वह सँसार की सम्पदा बन जाता है।** वह एक माता की सम्पदा नहीं रहता। वह सँसार की सम्पदा बन करके रहता है। वह एक वैज्ञानिक बन जाता है लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाला अणु और परमाणुओं को जानने वाला, यन्त्रों में विराजमान हो करके वह चन्द्र लोक को जा रहा है, शुक्र को जा रहा है, ध्रुव की यात्रा कर रहा है उस पर तेरा क्या अधिकार रह गया है, वह तो लोकों का बन गया है माँ! तूने उस बालक को जन्म दिया। वही तेरा कर्त्तव्य है। वही तेरा धर्म है। तेरे गर्भ को ऊँचा बनाने वाला महात्मा ध्रुव जैसा यान में विराजमान हो करके ध्रुव की यात्रा कर रहा है। मैं धर्म के ऊपर कहाँ तक चर्चा करूँगा। सर्वत्र वेद का एक-एक अक्षर धर्म से पिरोया हुआ है। यदि वेद के

एक-एक अक्षर से धर्म चला जाए तो वेद, वेद नहीं रहता। **मानव से धर्म चला जाएगा तो यह मानव नहीं रहेगा।** इसलिए मानव का एक-एक अंग धर्म से पिरोया हुआ है। अरे ! वह धर्म सर्वत्र वायु की भाँति ओत-प्रोत है, **एक ही धर्म है सँसार में, मानवता।**

धर्म

सर्व धर्मों में गौणिकता आ जाती है, उसमें बहुवचन आता है अरे ! तुम उसमें अनेकता प्रतिपादन क्यों करते हो? जब प्रभु से धर्म एक है, प्रभु ही एक है। जहाँ प्रभु एक है वहाँ तुमने अनेकता का प्रतिपादन कहाँ से जाना? इससे दृष्टिपात होता है कि तुम्हें वेद के एक अक्षर का भी ज्ञान नहीं है। यह सर्वाधर्म की चर्चा कहाँ से आ गई? वेद का ऋषि कहता है कि धर्म क्या है, सूर्य का प्रकाश आ रहा है वह विषधर के लिए भी है, सिंह के लिए भी है, जो अमृत पान कर रहा है उसके लिए भी किरणें आ रही हैं, उन्हीं किरणों से विष को अपने में धारण करके विष अपने में धारण कर रहा है। विष बना रहा है उन्हीं किरणों से, सिंहराज उन्हीं किरणों से हिंसक बन रहा है और योगी राज अमृत को पान करने वाला उन्हीं किरणों से अपने में तेज और अमृत को पान कर रहा है। अरे ! उसी का नाम तो धर्म है, कहाँ चले गए तुम।

मुझे बहुत पुरातन काल में मेरे प्यारे महानन्द ने मुझे चर्चा प्रकट करते हुए कहा था। आज बेटा ! मैं कहाँ तक एक-एक माह तक धर्म के ऊपर चर्चा करूँगा तो यह निबटारा नहीं होगा। जब मैं यह कहता हूँ कि ओ३म् रूपी सूत्र में यह सँसार पिरोया हुआ है तो पिरोया हुआ होने से उसकी एक माला बन गई उस माला का नाम ही तो धर्म है। यह जो प्रकृति रूपी मनके हैं अणु परमाणु यह ओ३म् रूपी चेतना में पिरोए हुए हैं और इस माला का नाम ही तो धर्म है। जो मानव उस माला को धारण कर लेता है वह योगी बन जाता है और जो माला को त्याग देता है वह अज्ञानी और दैत्य बन जाता है। धर्म धर्म की चर्चा करते रहते हैं बारम्बार। पुत्र !

धर्म क्या है? धर्म को तो कोई-कोई जानता है। **"जो परमात्मा को जानता है वह धर्म को जानता है और जो धर्म को जानता है वह परमात्मा को जानता है और जो परमात्मा को जानता है वह परमात्मा की चरी को जानता है और जो परमात्मा की चरी को जानता है वह ब्रह्मचारी है और जो ब्रह्मचारी है वह देवता है और जो देवता है वह धर्म के मर्म को जानता है।"**

तो महाराजा अश्वपति से ऋषियों ने यह कहा कि तुम्हारे राष्ट्र में एक दूसरे का कोई ऋणी नहीं होना चाहिए। वह माता के ऋण से उऋण हो रहा है जो अपने शरीर को न त्याग करके अपने शरीर की आभाओं को लेकर के लोकों की उड़ान उड़ रहा है। माता से कह रहा है कि माता यह तेरा सौभाग्य है, आज तूने मुझे जन्म दिया है। मैं दूसरे लोकों में जा रहा हूँ। यह तो तेरे गर्भाशय को उज्ज्वल बना रहा हूँ। योगी बन करके कह रहा है कि माता यह तो मेरा सौभाग्य है, मैं तेरे गर्भाशय को ऊँचा बना रहा हूँ। माता कौशल्या को आज तक माता कहते हैं क्योंकि उससे राम ने जो जन्म लिया। राम ने माता को उज्ज्वलता दी। यदि राम नहीं होता तो कौशल्या को कौन माता कहता। दशरथ की माता को सँसार में दशरथ की माता कहता है, सँसार नाम भी नहीं जानता। परन्तु कौशल्या का नाम सँसार जानता है, क्योंकि राम ने जो जन्म लिया था, राम जन्म नहीं लेता तो माता कौशल्या नहीं बनती। इसीलिए मेरे प्यारे ! वही तो मानव का धर्म है जो एक दूसरे मानव को उज्ज्वल बना रहा है। लोक लोकान्तर एक दूसरे को धारण कर रहे हैं। ऐसे-ऐसे विशाल लोक हैं जिसमें 72-72 हजार पृथ्वियाँ समा जाती हैं परन्तु वह एक-दूसरे की आकर्षण शक्ति से स्थिर हो रहे हैं। **अरे ! यही तो एक-दूसरे को धारण करने का नाम धर्म है।** एक आकाश गंगा है उस एक आकाश गंगा में ऐसे-ऐसे मण्डल हैं जिस एक मण्डल को 172 सूर्य एक ही मण्डल को प्रकाश देते हैं ऐसे विशाल मण्डल हैं प्रभु के राष्ट्र में। परन्तु वे कैसे स्थिर हैं?

एक-दूसरे से स्थिर हो रहे हैं, एक धागे में पिरोए हुए हैं चेतना में, एक-दूसरे को धारण करके गति कर रहे हैं, वह है बेटा ! उनका धर्म। इसलिए **मानव का क्या धर्म है? "मानव, मानव को शिक्षित बनाता चला जाए। मानव, मानव से शिक्षा लेता चला जाए यही इनका धर्म कहलाया गया है।"**

ऋषि-मुनियों का परामर्श

आज का विचार विनिमय क्या कि महाराजा अश्वपति से ऋषियों ने यही कहा कि तुम्हारे राष्ट्र में एक दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए। राजा जो नियम बनाता है प्रजा उसको धारण करे। अनुचित नहीं, जो यथोचित है उसको धारण करे और उससे अपने स्वाभिमान तथा आत्मा को हनन नहीं करना चाहिए। प्रजा में, यदि राजा आत्म हनन की चर्चा करता है तो बुद्धिमान और विवेकी और तपस्वी पुरुषों का कर्त्तव्य है कि यदि वह तपा हुआ नहीं है तो राजा के प्रति अशुद्ध घोषणा नहीं चाहिए। तपे हुए विचारों से उच्चारण करना चाहिए कि तेरे राष्ट्र में यह नियम अशुद्ध है। तुम प्रजा के अन्तःकरण को क्यों निगल रहे हो? उनके स्वाभिमान को क्यों नष्ट कर रहे हो? उनका जो आत्माभिमान है वह जो उनका धर्म है, धर्म को नष्ट करके कहाँ जाओगे? राजा, एक समय वह होगा कि राजा एक समय सँसार से एक समय स्वयँ चला जायेगा।

चित्रकार की उन विचारधारा को लाना, मानव के अन्तःकरण में धारण कराना उसी का नाम धर्म है और धर्म को जानने वाला सँसार में उदासीन नहीं होता। यह आज का हमारा विचार समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा। अब समय मिलेगा तो शेष चर्चा कल प्रकट करूँगा अब वेदों का पाठ होगा।

दिनाँक : 9 मई, 1976
स्थान : सर्वधर्म सम्मेलन
लाक्षागृह, बरनावा

॥ ओ३म् ॥

गायत्री की विवेचना

गायत्री कहते किसे हैं? मैंने कई काल में कहा है पुत्र ! संसार में जितने भी वेदमन्त्र हैं, प्रत्येक वेदमन्त्र उस महान् प्रभु की आभा है और उसी का गान गाता रहता है। परन्तु ऋषि-मुनियों ने वेदों में से उस वस्तु को व्यवहार में साकार रूप दिया जिसका जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध माना जाता है। जैसे गायत्री 24 अक्षरों वाली गायत्री कहलाती है। तीन उसमें व्याहृतियाँ मानी जाती हैं। हमारा यह जो स्थूल मानव शरीर है यह 24 तत्त्वों से बना हुआ है। उन 24 तत्त्वों से जो बना हुआ शरीर है प्रत्येक अक्षर का सम्बन्ध प्रत्येक तत्त्व से माना जाता है इस मानवीय तथ्य को जानना है। उस महान् प्रभु की प्रतिभा के विभाग किए जाते हैं। कुछ शब्द इस प्रकार के हैं जिनका सम्बन्ध मानो प्राणों से है, कुछ का सम्बन्ध मन से है। कुछ का मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार से, कुछ का इन्द्रियों से है। परन्तु प्रत्येक अक्षर का जो बोधक है यह हमारा शरीर ही है। तो ऋषि-मुनियों ने इन वाक्यों को साकार रूप दिया और साकार रूप देने का एक ही अभिप्राय था कि जिसके ऊपर हम अनुसन्धान कर सकें और अपने जीवन की आभा से उसका हम सम्बन्ध अथवा उसका मिलान कर सकें। रहा यह कि मैं गायत्री के गूढ़तम रहस्य को तो कोई विशेष प्रतिभा में ले जाना नहीं चाहता हूँ। यह वाक्य है कि **प्रत्येक शब्द को हमारे यहाँ गायत्री कहा जाता है।** गायत्री का अभिप्राय है कि हमारे यहाँ जो गाई जाती है और वेद का प्रत्येक शब्द गाया जाता है। जब ऋचा को गाते हैं तो मन मग्न हो जाते हैं। क्योंकि वह गायत्री कहलाई जाती है। जिसके ऊपर हमें बारम्बार विचार-विनिमय करना है। जिस आभा को ले करके हम संसार की उस प्रतिभा में ऊँचा बनना चाहते हैं। जिस जीवन में हमारे में एक महत्ता आती हो उस आभा का नाम बहुत ही प्रियतम माना गया है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

श्रीमति इन्द्रा त्यागी धर्मपत्नि श्री विपिन भारद्वाज जी निवासी ग्राम रई, जिला मुजफ्फरनगर, उ.प्र. ने अपने सुपुत्र प्रिय रक्षित त्यागी के जन्मदिन के शुभावसर पर प्रतिवर्ष की भाँति 1100 रुपये का सात्त्विक सहयोग समिति के प्रकाशन के कार्य को ऊर्ध्वा में निरन्तर गतिशील रखने के लिये उदारता से प्रदान किया है। जिसके लिये समिति हृदय से बारम्बार आभार प्रकट करती है।

श्री भारद्वाज जी आजकल गुड़गावां में अपने परिवार के साथ रहते हुए भी पूज्यपाद गुरुदेव के क्रियाकलापों में पूर्णरूप से संलग्न रहते हैं और उनके साहित्य को श्रद्धा के साथ अध्ययन करते हुए अपने जीवन को परिवार सहित आध्यात्मिकता में ले जाने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

भारद्वाज जी के निरन्तर सहयोग के लिए समिति पुनः से आभार प्रकट करती है और सुपुत्र के जन्म दिवस पर दीर्घ आयु की कामना करते हुए परमपिता परमात्मा से समस्त परिवार की सुख, शान्ति व समृद्धि के लिए प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	110.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	100.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला बागपत, (उ.प्र.)। दूरभाष : 01234 240395
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। दूरभाष : 0131 2606414
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष : 011-26498737
5. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-4165802
6. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) दूरभाष : 9410452076
7. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) दूरभाष : 09412139333
8. श्री विवेक त्यागी, 16ए अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष : 0122-2316196
9. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-2642052
10. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110ए मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) दूरभाष : 9899228860, 9871367937
11. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। दूरभाष : 9910589486
12. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) दूरभाष : 9313530505
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-23282088
14. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
15. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष : 011-23977216
16. जवाहर बुक डिपो, बुढ़ाना गेट, आर्य समाज मेरठ शहर (उ.प्र.)।

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	200 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''संहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है :-

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) नई दिल्ली

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

जब हम वेद की प्रतिभा को विचार-विनिमय करने लगते हैं तो कितना ही सँसार का विशेषज्ञ और व्याख्याता हो वह केवल सूर्य के एक सूक्ष्म से प्रकाश के तुल्य ही रहता है क्योंकि उसका ज्ञान अनन्त है और महानूता से परणित है। आज जब हम प्रकृति में प्रभु का सन्निधान मात्र ही स्वीकार करते हैं और प्रकृति का स्वभाव उमड़ने लगता है परन्तु जब हम यह विचारते हैं कि मानव विज्ञान में क्या किसी भी आंगन में अभिमान् का अधिकारी नहीं होता, वह अपने गौरव से यह नहीं उच्चारण कर सकता कि मैंने इस वस्तु को जाना है, उस पर वह अभिमान् नहीं कर सकता उसे अधिकार ही नहीं है क्योंकि जो वस्तु मानव जानने का प्रयास करता है वह जो प्यारा देव प्रभु है वह इतना महान् और अलौकिक है कि उसने उन वस्तुओं को तेरे विचारने से पूर्व उनका निर्माण कर दिया, उनको उत्पन्न कर दिया है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 42 : अंक : 503
अगस्त 2014

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-08-2014
Published on 5th day of the same month